E-ISSN-2584-2870 https://doi.org/10.65833/dbs.2026.346

केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
श्रीरघुनाथकीर्तिपरिसरः, देवप्रयागः
देवभूमि-सौरभम्
E-ISSN 2584-2870
Devabhūmisaurabham

Vol 3 Issue 1 Jan-June 2026 Devabhūmisaurabham International Journal of CSU Shri Raghunath Kirti Campus Devprayag Uttarakhand India

महाभाष्य और वाक्यपदीय के अनुरूप व्याकरणिक साधुत्व और पुण्य पाप मीमांसा का अनुशीलन

गिरीशचन्द्रभट्टः (शोधच्छात्रः)
के. सं. वि. श्रीरघुनाथकीर्तिपरिसरःदेवप्रयागः
अणुसङ्केतःgirda4353@gmail.com

शोधसारः-

प्रस्तुत शोधपत्र महर्षि पतञ्जलि के 'व्याकरण महाभाष्य' (पस्पशाह्निक) के प्रसिद्ध सिद्धान्त**समानायामर्थगतौ शब्देनापशब्देन च धर्मनियमः क्रियते एवं कौण्डभट्ट द्वारा व्याख्यायित"वाचकत्वाविशेषे वा नियमः पुण्यपापयोः"** का दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विश्लेषण करता है। जहाँ आधुनिक भाषाविज्ञान केवल अर्थसंप्रेषण (Communication) को महत्व देता है, वहीं भारतीय व्याकरण परम्परा भाषा को 'पुण्य' और 'मोक्ष' से जोड़ती है। इस लेख में पतञ्जलि के 'धर्मनियम' और भर्तृहरि के 'शब्द-ब्रह्म' सिद्धांतों के समन्वय के माध्यम से यह सिद्ध किया गया है कि व्याकरण केवल भाषाई संरचना का शास्त्र नहीं, अपितु एक आध्यात्मिक अनुशासन है।धर्मनियम और पुण्य-पाप का विधानपतञ्जलि इस नियम की तुलना सामाजिक एवं शास्त्र सम्मत मर्यादाओं से करते हैं- भक्ष्य-अभक्ष्य दृष्टांत- जैसे भूख मिटाने की शक्ति शुद्ध भोजन और अशुद्ध भोजन दोनों में है, किन्तु आरोग्य और धर्म हेतु केवल 'भक्ष्य' का सेवन किया जाता है। ठीक वैसे ही, अर्थ-बोध होने पर भी आध्यात्मिक कल्याण हेतु केवल 'साधु' शब्दों का प्रयोग अनिवार्य है।अभ्युदय का साधन शास्त्रसम्मत शब्दों का ज्ञान और प्रयोग'स्वर्गे लोके च कामधुग्भवति' (स्वर्ग और अभीष्ट फल देने

वाला) होता है, जबकि असाधु प्रयोग से मनुष्य दोष का भागी बनता है।व्याकरण का आध्यात्मिक पक्ष- भर्तृहरि का परिप्रेक्ष्य -आचार्य भर्तृहरि ने 'वाक्यपदीय' में पतञ्जलि के इसी विचार को उच्च स्तर तक पहुँचाया है। उन्होंने व्याकरण को 'अध्यात्म' से जोड़ते हुए कहा कि - "तद्द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्।पवित्रं सर्वविद्यानामधिविद्यं प्रकाशते॥"[1] (वाक्यपदीय १.१४)व्याख्या- भर्तृहरि व्याकरण को 'अपवर्गस्य द्वारम्' (मोक्ष का द्वार) मानते हैं। उनके अनुसार, व्याकरण वाणी के दोषों की 'चिकित्सा' (औषधि) है। जब मनुष्य साधु शब्दों के प्रयोग द्वारा अपनी वाणी को शुद्ध करता है, तो उसकी बुद्धि परिष्कृत होती है। यह परिष्कृत बुद्धि ही 'शब्द-ब्रह्म' का साक्षात्कार करने में समर्थ होती है।साधना के रूप में व्याकरण: भर्तृहरि के लिए व्याकरण केवल नियमों का जाल नहीं, बल्कि एक 'योग' (शब्द-योग) है, जो वक्ता को अविद्या के अंधकार से निकालकर परम प्रकाश की ओर ले जाता है।

कूटशब्द (पारिभाषिक शब्द) –वाचकत्व, पुण्य, पाप, अपभ्रंश, व्याकरण मोक्ष, साधु, असाधु, भक्ष्य, अभक्ष्य

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परम्परा में व्याकरण को **'मुखं व्याकरणं स्मृतम्'**[2] (वेदों का मुख) कहा गया है। पतञ्जलि के अनुसार, व्याकरण का मूल उद्देश्य 'शब्दानुशासन' है। महाभाष्य के आरम्भ में एक महत्वपूर्ण शंका उठाई गई है: "यदि अशुद्ध शब्दों (जैसे गावी, गोणी) से भी वही अर्थ प्राप्त होता है जो शुद्ध शब्द (गौः) से, तो व्याकरण के कठिन नियमों की क्या आवश्यकता है?" इसी जिज्ञासा के उत्तर में पतञ्जलि ने कहा कि- **एवमिहापि समानायामर्थगतौ शब्देनापशब्देन च धर्मनियमः क्रियते**[3] इति

[1]वाक्यपदीय (ब्रह्मकाण्ड) का 14 कारिका
[2]पाणिनीय शिक्षा श्लो. 42
[3]व्याकरणमहाभाष्यम् (पस्पशाह्निकम्) पृष्ठ सं.-67

धर्मनियम का प्रतिपादन किया उसे कौण्डभट्ट ने वैयाकरणभूषणसार में"वाचकत्वाविशेषे वा नियमः पुण्यपापयोः"। इसके माध्यम से परिभाषित किया यह सूत्र स्पष्ट करता है कि अर्थ बोध में समानता होने पर भी, पुण्य की प्राप्ति हेतु साधु शब्दों का प्रयोग ही श्रेयस्कर है।भारतीय वाङ्मय में ज्ञान के समस्त अनुशासनों में व्याकरण का स्थान सर्वोपरि है। इसे केवल एक भाषा-विज्ञान न मानकर 'वेदाङ्ग' की संज्ञा दी गई है, जिसका अर्थ हैवेदों का वह अंग जो उनके अर्थों को स्पष्ट और सुरक्षित रखता है। मुनित्रय (पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि) की परम्परा में महर्षि पतञ्जलि का 'व्याकरण महाभाष्य' केवल सूत्रों की व्याख्या नहीं है, बल्कि यह व्याकरण के दार्शनिक और आध्यात्मिक धरातल को सुदृढ़ करने वाला ग्रंथ है।प्रस्तुत शोधपत्र का मूल केंद्र पतञ्जलि द्वारा महाभाष्य के 'पस्पशाह्निक' में वर्णित एक अत्यंत गंभीर विमर्श है। पतञ्जलि के सम्मुख एक आधारभूत प्रश्न खड़ा होता है कि भाषा का प्रयोजन क्या है? यदि भाषा का एकमात्र लक्ष्य 'अर्थ-प्रतीति' (Communication of Meaning) है, तो व्याकरण के कठोर नियमों की आवश्यकता क्यों? लोक में हम देखते हैं कि शुद्ध शब्द 'गौः' कहने पर भी 'गाय' का बोध होता है और अशुद्ध या अपभ्रंश शब्द 'गावी' या 'गोणी' कहने पर भी वही अर्थ प्राप्त होता है। यहाँ 'वाचकत्व' (अर्थ बताने की शक्ति) दोनों में समान (अविशेष) है।इसी शंका के समाधान में पतञ्जलि वह क्रान्तिकारी सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं जो भाषा को नैतिकता और धर्म से जोड़ देता है। "**एवमिहापि समानायामर्थगतौ शब्देनापशब्देन च धर्मनियमः क्रियते**"[4]इसी की और व्याख्या करते हुए कौण्डभट्ट जी कहते है कि **"वाचकत्वाविशेषे वा नियमः पुण्यपापयोः"**।[5]यह सिद्धान्त संकेत करता है कि मनुष्य का भाषाई व्यवहार केवल भौतिक जगत तक सीमित नहीं है। पतञ्जलि के अनुसार, साधु शब्दों का प्रयोग एक 'धर्मनियम' है। जैसे धार्मिक अनुष्ठानों में पवित्रता का ध्यान रखा जाता है, वैसे ही भाषा के प्रयोग में 'साधुत्व' का ध्यान रखना वक्ता के चारित्रिक और आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिए अनिवार्य है। पतञ्जलि तर्क देते हैं कि अशुद्ध शब्दों का प्रयोग व्यक्ति को 'मलेच्छ' (अस्पष्टवादी या संस्कारहीन) बनाता है,

[4]व्याकरणमहाभाष्यम् (पस्पशाह्निकम्) पृष्ठ सं.-67

[5]वैयाकरणभूषणसार (शक्तिनिर्णय) 38 कारिका

जबकि शुद्ध और शास्त्रसम्मत शब्दों का सम्यक् ज्ञान उसे 'पुण्य' का भागी बनाता है।प्रारंभिक रूप में यह नियम केवल भाषाई अनुशासन लग सकता है, किन्तु इसकी गहराई में जाने पर पता चलता है कि यह 'शब्द-नित्यता' और 'शब्द-ब्रह्म' की साधना का प्रथम सोपान है। परवर्ती काल में आचार्य भर्तृहरि ने इसी विचार को पल्लवित करते हुए व्याकरण को 'मोक्ष का द्वार' (तद्द्वारमपवर्गस्य) घोषित किया। अतःयह प्रस्तावना स्पष्ट करती है कि व्याकरण का मुख्य ध्येय केवल शब्दों का रूप सिद्ध करना नहींबल्कि वक्ता की चेतना को 'संस्कृत' कर उसे परम तत्व की ओर अग्रसर करना है।

शोधलेख

1. **वाचकत्व की समानता**

पतञ्जलि स्पष्ट करते हैं कि शब्द का मुख्य कार्य अर्थ का बोध कराना है। लोक व्यवहार में हम देखते हैं कि अशुद्ध शब्द (अपभ्रंश) भी अर्थ पहुँचाने में उतने ही सक्षम हैं जितने शुद्ध शब्द हैवाचकत्व की समानता पतञ्जलि स्वीकार करते हैं कि 'वाचकत्व' (अर्थ बताने की शक्ति) साधु और असाधु दोनों शब्दों में समान है।उदाहरण: 'गौः' (साधु) और 'गावी' (असाधु/अपभ्रंश) दोनों श्रोता के मन में एक ही आकृति (गाय) उत्पन्न करते हैं।तर्क- यदि केवल कार्यसिद्धि (Communication) ही लक्ष्य होतातो व्याकरण का कोई प्रयोजन नहीं रहता। अतः व्याकरण का कार्य केवल अर्थ समझाना नहीं, बल्कि शब्दों का 'नियमन' करना है।

2. **दार्शनिक शंका:** यदि 'गावी' बोलने से भी वही गाय समझ आती है जो 'गौः' बोलने से, तो व्याकरण द्वारा अपभ्रंशों का निषेध क्यों? क्या व्याकरण केवल एक जटिल बौद्धिक व्यायाम है?

3. **समाधान:** यहाँ पतञ्जलि'अर्थ-बोध' को भाषा का अन्तिम लक्ष्य नहीं मानते। वे 'अभ्युदय' (आध्यात्मिक उन्नति) को अंतिम लक्ष्य मानते हैं। उनके अनुसार, अर्थ बोध तो पशुपक्षियों की ध्वनियों से भी हो सकता है, किन्तु 'साधु शब्द' का प्रयोग वक्ता के संस्कार का परिचायक है।

4. **धर्मनियम और पुण्य-पाप का विधान**पतञ्जलि यहाँ 'धर्मनियम'की स्थापना करते हैं। वे तर्क देते हैं कि सामर्थ्य होने पर भी 'मर्यादा' का पालन ही धर्म है। इसके लिए वे अत्यंत व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं- **भक्ष्य-अभक्ष्य न्याय** भूख शांत करने का सामर्थ्य शुद्ध सात्विक भोजन और अभक्ष्य (अशुद्ध/निषिद्ध) पदार्थ दोनों में है। किन्तु शास्त्र नियम बनाता है कि पुण्य की प्राप्ति हेतु केवल 'भक्ष्य' का ही सेवन करना चाहिए। इसी प्रकार, अर्थ बताने की शक्ति दोनों में होने पर भी, कल्याण हेतु 'साधु शब्द' ही ग्राह्य है।यज्ञीय शुद्धि- जैसे यज्ञ में विधिपूर्वक दी गई आहुति ही फलदायी होती है, वैसे ही भाषा के महायज्ञ में शुद्ध शब्दरूपी आहुति ही 'पुण्य' उत्पन्न करती है। अशुद्ध उच्चारण या अपशब्दों का प्रयोग वक्ता की आंतरिक ऊर्जा और सामाजिक प्रतिष्ठा का क्षरण करता है।

5. **साधु शब्द**- दिव्य शक्ति का वाहकपतञ्जलि के अनुसार, शब्द केवल ध्वनि नहीं है; वह एक शक्ति है।महाभाष्यकार कहते हैं- "**एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग्भवति"**।[6]अर्थात् शास्त्र सम्मत एक भी शब्द का सम्यक् प्रयोग स्वर्ग में कामधेनु के समान फल देने वाला होता है।असाधु शब्दों का निषेध: अशुद्ध शब्द (असाधु) वक्ता की बुद्धि में भ्रम पैदा करते हैं और उसे 'मलेच्छ' (संस्कारहीन) की श्रेणी में खड़ा करते हैं। 'पुण्य और पाप' का यह नियम केवल डराने के लिए नहीं, बल्कि समाज में एक मानक और परिष्कृत भाषा को बनाए रखने के लिए अनिवार्य है।

---

[6]एकः पूर्वपरयोः (६.१.८४) भाष्य में एवं शब्दज्ञानस्य धर्मजनकताधिकरणम् के प्रथम आक्षेप भाष्य प्रदीप में।

6. **व्याकरण और अध्यात्म का समन्वय**विश्लेषण का अन्तिम चरण यह है कि व्याकरण मनुष्य को 'शब्द-ब्रह्म' की ओर ले जाता है। साधु शब्दों का निरन्तर अभ्यास मन को एकाग्र और शुद्ध करता है। जब वक्ता व्याकरण के माध्यम से शब्दों के मूल 'प्रकृति-प्रत्यय' को जानने लगता है, तो वह भाषा के स्थूल रूप से हटकर उसके सूक्ष्म स्वरूप में प्रवेश करता है। यही वह बिन्दु है जहाँ व्याकरण 'अध्यात्म' बन जाता है। यहाँ पतञ्जलि का 'पुण्य' वक्ता की चित्त-शुद्धि का पर्याय है, जो उसे योग के मार्ग पर अग्रसर करता है।

7. **व्याकरण का आध्यात्मिक पक्ष**- भर्तृहरि का परिप्रेक्ष्य महर्षि पतञ्जलि ने जहाँ 'पुण्य और पाप' के माध्यम से व्याकरण को नैतिक धरातल प्रदान किया, वहीं आचार्य भर्तृहरि ने अपने महान ग्रंथ 'वाक्यपदीयम्' में व्याकरण को साक्षात् 'ब्रह्म-विद्या' के रूप में प्रतिष्ठित किया। उनके अनुसार व्याकरण केवल शब्दों की सिद्धि का शास्त्र नहीं, बल्कि आत्मा के साक्षात्कार का परम मार्ग है।

8. **शब्द-ब्रह्म की अवधारणा**

भर्तृहरि के दर्शन का केंद्र 'शब्द-ब्रह्म' है। वे ग्रन्थ के मंगलाचरण में ही घोषित करते हैं कि-

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम्।

विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥ (वाक्यपदीय १.१)[7]

अर्थ- वह ब्रह्म जो अनादि और अनंत (जन्म-मृत्यु से रहित) है, जिसका स्वरूप 'शब्द' है और जो अविनाशी (अक्षर) है, वही इस संपूर्ण जगत के रूप में और अर्थों के रूप में विवर्तित होता है।व्याख्या-

[7]वाक्यपदीय (ब्रह्मकाण्ड) प्रथम कारिका

चूंकि यह संपूर्ण सृष्टि 'शब्द' से ही उत्पन्न है, इसलिए शब्द की शुद्धि ही मूल तत्व की शुद्धि है। व्याकरण वह अनुशासन है जो हमें इस विकारी जगत से निकालकर उस 'अक्षर ब्रह्म' तक पहुँचाता है।

9. व्याकरण मोक्ष का द्वार और वाणी की चिकित्सा

भर्तृहरि व्याकरण को केवल एक शास्त्र नहीं, बल्कि एक 'औषधि' और 'द्वार' मानते हैं-

तद्द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्।

पवित्रं सर्वविद्यानामधिविद्यं प्रकाशते॥ (वाक्यपदीय १.१४)[8]

अर्थ: यह व्याकरण मोक्ष (अपवर्ग) का द्वार है और वाणी के दोषों (मलों) की चिकित्सा है। यह सभी विद्याओं में पवित्र और सर्वोपरि है।व्याख्या-वाङ्मल चिकित्सा जैसे आयुर्वेद शरीर के दोषों को दूर करता है, वैसे ही व्याकरण 'वाणी के मलों' (अशुद्धियों) को दूर करता है। अशुद्ध वाणी बुद्धि को मलिन करती है, जबकि शुद्ध वाणी बुद्धि को सत्य के ग्रहण योग्य बनाती है।मोक्ष का द्वार- व्याकरण के माध्यम से जब हम शब्दों का 'साधुत्व' पहचानते हैं, तो यह प्रक्रिया हमारी चेतना को स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाती है, जो अंततः मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है।

10.साधु शब्दों की महिमा और पुण्य-प्राप्ति

भर्तृहरि पतञ्जलि के 'पुण्य' वाले विचार को पुष्ट करते हुए कहते हैं कि साधु शब्दों का प्रयोग ऋषियों की वाणी है -

साधुत्वज्ञानविषया सेयं व्याकरणस्मृतिः।

अविच्छेदेन शिष्टानां इदं स्मृतिनिबन्धनम्॥(वाक्यपदीय १.१५८)[9]

---

[8]वाक्यपदीय (ब्रह्मकाण्ड) चतुर्दश कारिका

[9]वाक्यपदीय (ब्रह्मकाण्ड) 158 कारिका

अर्थ: शिष्ट पुरुषों (विद्वानों) द्वारा जो व्याकरण-सम्मत साधु शब्दों की परंपरा चली आ रही है, वही परम पद (ब्रह्म) की प्राप्ति का कारण है।व्याख्या- यहाँ 'पुण्य' का अर्थ केवल स्वर्ग की प्राप्ति नहीं, बल्कि उस 'परम पद' की प्राप्ति है जहाँ वाणी शान्त हो जाती है। व्याकरण वह 'सोपान' (सीढ़ी) है जो अविद्या के अंधकार से निकालकर साधक को अमृत की ओर ले जाती है।

शब्द-योग की साधना भर्तृहरि व्याकरण को एक 'योग' के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार, जो व्यक्ति व्याकरण के माध्यम से साधु शब्दों के रहस्य को जान लेता है, वह 'शब्दपूर्वा योग' की साधना करता है-

तस्मादकृतकं शास्त्रं स्मृतिं च सनिबन्धनाम्।

आश्रित्यारभ्यते शिष्टैः साधुत्वविषया स्मृतिः॥(वाक्यपदीय १.४३)[10]

निष्कर्ष-पतञ्जलि का 'पुण्य-पाप' का नियम यहाँ 'शब्द-योग' में बदल जाता है। व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग वक्ता को 'पश्यन्ती' (वाणी की उच्चतम सूक्ष्म अवस्था) तक पहुँचाकर उसे ब्रह्म-साक्षात्कार के योग्य बनाता है। इस प्रकार, व्याकरण का अध्ययन साक्षात् ईश्वर की आराधना के समान है।

पुण्य और पाप के स्वरुप कीमीमांसा दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में–

भारतीय दर्शन और शास्त्रों के अनुसार, पुण्य कोई दिखाई देने वाली भौतिक वस्तु नहीं है, बल्कि यह एक सूक्ष्म ऊर्जा या अदृश्य संस्कार है। पुण्य का पता मुख्य रूप से उसके लक्षणों, परिणामों और मानसिक अनुभूतियों से चलता है।इसे पहचानने के मुख्य आधार निम्नलिखित हैं:

---

[10]वाक्यपदीय (ब्रह्मकाण्ड) 43 कारिका

१. आंतरिक अनुभूति

मन की शांति और प्रसन्नता जब आप कोई पुण्य कर्म (जैसे किसी की निस्वार्थ मदद) करते हैं, तो तुरंत मन में एक गहरा संतोष और आनन्द महसूस होता है। यही पुण्य का पहला संकेत है।भय का अभाव: पुण्य करने वाले व्यक्ति का अंतःकरण शुद्ध होता है, जिससे उसके भीतर किसी बात का डर या ग्लानि नहीं होती।सात्विक विचारों का आना यदि आपके मन में लगातार दूसरों का भला करने, ईश्वर भक्ति और ज्ञान अर्जित करने के विचार आ रहे हैं, तो यह आपके संचित पुण्यों का असर है।

२. जीवन की परिस्थितियाँ और परिणाम

कर्म सिद्धांत के अनुसार, पूर्व में किए गए पुण्य जब फल देने के लिए तैयार होते हैं (प्रारब्ध बनते हैं), तो जीवन में निम्नलिखित बदलाव दिखते हैं अचानक संकटों का टल जाना कई बार बड़ी दुर्घटना या मुसीबत आते-आते टल जाती है। शास्त्रों के अनुसार, यह व्यक्ति के पूर्व पुण्यों का 'सुरक्षा कवच' होता है जो उसकी रक्षा करता है।अनुकूल परिस्थितियाँ मिलना, बिना ज्यादा संघर्ष के अच्छे अवसर, सच्चा मार्गदर्शन, योग्य मित्र और सहायक लोग मिलना पुण्य के उदय होने का लक्षण है।संकट में भी मानसिक संतुलन, विपरीत परिस्थितियों में भी जब व्यक्ति का धैर्य नहीं टूटता और वह सही मार्ग पर टिका रहता है, तो यह उसके पुण्यों की शक्ति को दर्शाता है।

३. महर्षि पतंजलि के अनुसार (चित्त की स्थिति)

योगसूत्र के अनुसार, पुण्य कर्मों का पता चित्त (मन) के व्यवहार से चलता है पुण्यवान का व्यवहार पुण्य के प्रभाव से व्यक्ति के भीतर दूसरों के सुख को देखकर प्रसन्नता (मुदिता) और दुखियों को देखकर करुणा (दया) का भाव स्वतः पैदा होता है।पाप का क्षय जैसे-जैसे पुण्य बढ़ता है, मन से क्रोध, लोभ, और मोह जैसे विकार कम होने लगते हैं।

४. विवेक बुद्धि जागृत होना

श्रीमद्भगवद्गीता और उपनिषदों के अनुसार, सही और गलत के बीच अंतर करने की क्षमता (विवेक) का जागृत होना ही सबसे बड़े पुण्य का प्रमाण है। जब व्यक्ति का पुण्य उदय होता है, तो उसकी बुद्धि कुमार्ग (गलत रास्ते) को छोड़कर सन्मार्ग की ओर बढ़ने लगती है।संक्षेप में, यदि आपका मन शांत है, आप विपरीत परिस्थितियों में भी सुरक्षित हैं, और आपकी प्रवृत्ति भलाई की ओर है, तो यह स्पष्ट संकेत है कि आपके पुण्य कर्म प्रभावी हैं।

पतञजलि का धर्मनियम क्या है ?

महाभाष्य में पतंजलि कहते है कि अर्थ की अभिव्यक्ति तो संस्कृत और लोकभाषा दोनों से हो सकती है लेकिन व्याकरण का नियम धर्म (पुण्य, कल्याण) के लिए है। जब गो बोलने से भी गाय समझ आती है और गावी या गाय बोलने से भी तो अन्तर कहां है- पतंजलि के अनुसार शास्त्र सम्मत संस्कृत शब्दों के प्रयोग से अभ्युदय (आध्यात्मिक या मानसिक उन्नति) होती है। यह ठीक वैसा ही है जैसे कुआं खोदकर भी प्यास बुझती है और गंगाजल पीकर भी, लेकिन दोंनो का सांस्कृतिक और मानसिक प्रभाव अलग होता है ।

क्या सचमुच पुण्य और पाप होता है–?

यदि हम पुण्य और पाप को किसी स्वर्ग नरक की काल्पनिक कहानी से अलग हटाकर वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक रूप में देखे तो वह बहुत व्यावहारिक है-

पुण्य का क्या अर्थ है- संस्कृत के शब्दों के उच्चारण से मस्तिष्क की नसें और न्यूरॉन्स सक्रिय होते है इस वैज्ञानिक शुद्धता से जो मानसिक शान्ति और सकारात्मकता मिलती है उसी को प्राचीन काल में पुण्य कहा गया।

पाप का क्या अर्थ है- यहां संस्कृत न बोलने से कोई नरक वाला पाप नही लगता। पतंजलि के सन्दर्भ में पाप या अधर्म का अर्थ केवल अज्ञान या अशुद्धता है। जब हम अशुद्ध बोलते हैं तो हम अपनी भाषा और मानसिक एकाग्रता के स्तर को कम करते है जिससे हम कम सकारात्मक रहते है।

संस्कृत के शुद्ध उच्चारण से मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पडता है[11] इस पर आधुनिक न्यूरोसाइंस में वैज्ञानिक अनुसन्धान हुआ है। इस शोध को सम्पूर्ण विश्व में **द संस्कृत इफेक्ट** के नाम से जाना जाता है। जो कि **डॉ जेम्स हर्टजेल** जिन्होंने इटली के ट्रेंटो विश्वविद्यालय और **नेशनल ब्रेन रिसर्च सेंटर (हरियाणा)** के वैज्ञानिकों के साथ मिलकर यह रिसर्च की है।

शोधपत्रका निष्कर्ष-

उपर्युक्त विवेचन से यह सिद्ध होता है कि**एवमिहापि समानायामर्थगतौ शब्देनापशब्देन च धर्मनियमः क्रियते**[12]**एवं "वाचकत्वाविशेषे वा नियमः पुण्यपापयोः"**[13] सिद्धान्तों का केवल व्याकरणिक शुद्धि का आग्रह नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति की उस महान दृष्टि का परिचायक है जहाँ 'वाणी' को 'वाणी' नहीं बल्कि 'शक्ति' माना गया है।पतञ्जलि जहाँ 'धर्मनियम' के माध्यम से समाज में भाषाई मर्यादा स्थापित करते हैं, वहीं भर्तृहरि उसे 'मोक्ष का द्वार' बनाकर अध्यात्म की पराकाष्ठा पर पहुँचा देते हैं। अतः व्याकरण शास्त्र का अध्ययन मनुष्य को केवल एक अच्छा वक्ता ही नहीं बनाता, बल्कि उसे एक 'संस्कृत' (परिष्कृत) और 'धार्मिक' व्यक्तित्व प्रदान करता है। आज के आधुनिक काल में, जहाँ भाषा का पतन हो रहा है, यह सिद्धान्त हमें पुनः 'शब्द की पवित्रता' और उसके नैतिक उत्तरदायित्व की ओर लौटने का संदेश देता है।

---

[11] The Sanskrit effect.

[12] व्याकरणमहाभाष्यम् (पस्पशाह्निकम्) पृष्ठ सं.-67

[13] वैयाकरणभूषणसार (शक्तिनिर्णय) 38 कारिका

सन्दर्भग्रन्थसूची-

प्राथमिक स्रोत

1. पतंजलि; महाभाष्य (पस्पशाह्निक):संपादक: वेदव्रत मीमांसक, हरियाणा साहित्य संस्थान, रोहतक।
2. कैयट; महाभाष्य-प्रदीप:प्रकाशन: चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
3. भट्ट नागेश; महाभाष्य-प्रदीपोद्योत:प्रकाशन: राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान या चौखम्बा प्रकाशन।
4. भर्तृहरि; महाभाष्य-दीपिका:संपादक: के.वी. अभ्यंकर एवं वी.पी. लिमये, भण्डारकर प्राच्य शोध संस्थान, पुणे।
5. The Sanskrit effect.

सहायक और आधुनिक ग्रंथ

1. शास्त्री भीमसेन; महाभाष्य-प्रथमाह्निक (भैमी व्याख्या):प्रकाशन: भैमी प्रकाशन, दिल्ली।
2. द्विवेदी कपिल देव; संस्कृत व्याकरण दर्शन:प्रकाशन: विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
3. मीमांसक युधिष्ठिर; संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास:प्रकाशन: रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़।

कोश और शोध पत्रिकाएँ

1. अभ्यंकर के.वी.; A Dictionary of Sanskrit Grammar:प्रकाशन: Oriental Institute, Baroda.
2. वर्मा सत्यकाम; व्याकरण की दार्शनिक भूमिका:प्रकाशन: मुंशीराम मनोहरलाल, दिल्ली।

अन्तर्जालसन्दर्भग्रन्थसूची-

अष्टाध्यायी (वेबसाइट):बोडासनीलेश, संपादक. Ashtadhyayi.com, 2024, https://ashtadhyayi.com. एक्सेस तिथि: 6 मई 2026.